



2026:AHC:LKO:185

ए.एफ.आर.

इलाहाबाद उच्च न्यायालय
लखनऊ

अनुच्छेद 227 के तहत मामले संख्या - 7293/2025

श्रीमती कमला वर्मा एवं 5 अन्य

.....याचीगण

बनाम

अपर जिला न्यायाधीश -XII लखनऊ एवं 2 अन्य

.....प्रत्यर्थीगण

याचीगण के अधिवक्ता: जितेन्द्र कुमार सक्सेना,
प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता:

न्यायालय संख्या - 17

माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी,

1. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र कुमार सक्सेना को सुना और अभिलेखों का अवलोकन किया।
2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर की गई इस याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ताओं ने लखनऊ के माननीय लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा एससीसी वाद संख्या 60/2012: सलिल कुमार रस्तोगी बनाम राम भरोसे वर्मा (मृत) (विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से) में दिनांक 16.09.2013 को पारित एक-पक्षीय निर्णय और डिक्री को चुनौती दी है। याचिकाकर्ताओं ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित धारा 47 के तहत एक आवेदन दायर किया था, जिसमें एक-पक्षीय डिक्री के निष्पादन के आवेदन के विरुद्ध आपत्ति उठाई गई थी; और लखनऊ के लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश ने दिनांक 22.03.2015 के एक आदेश के माध्यम से इस आवेदन को खारिज कर दिया। इस अस्वीकृति आदेश को एससीसी पुनरीक्षण संख्या 24/2015 दायर करके चुनौती दी गई थी, जिसे दिनांक 27.05.2025 के एक निर्णय और आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया है; और याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 23.05.2015 के आदेश तथा दिनांक 27.05.2025 के रिविजनल आदेश की वैधता को भी चुनौती दी है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



3. याचिकाकर्ताओं ने विद्वान अपर जिला न्यायाधीश-XII, लखनऊ और लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश, लखनऊ को याचिका में विपक्षी संख्या 1 और 2 के रूप में पक्षकार बनाया है।

4. रजिस्ट्री ने याचिका में न्यायालयों को विरोधी पक्ष के रूप में शामिल किए जाने पर आपत्ति जताई थी, और यद्यपि याचिकाकर्ताओं ने एक पूरक हलफनामा दायर करके यह स्पष्ट किया है कि न्यायालयों को गलती से पक्षकार बना लिया गया था, फिर भी याचिका में न्यायालयों को विरोधी पक्ष की सूची से हटाने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई है; जबकि, वर्ष 1995 में **'सावित्री देवी बनाम जिला न्यायाधीश, गोरखपुर' (1999) 2 एससीसी 577** मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालयों और माननीय सर्वोच्च न्यायालय में दायर याचिकाओं में न्यायालयों को विरोधी पक्ष के रूप में शामिल करने की प्रथा की कड़ी आलोचना की थी।

5. **जोगेंद्रसिंहजी विजयसिंहजी बनाम गुजरात राज्य, (2015) 9 एससीसी 1** के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि: -

43. ...दीवानी अदालतें, जो मामलों का फ़ैसला करती हैं, वे इस शब्द के सबसे कड़े अर्थ में अदालतें हैं। न तो अदालत और न ही पीठासीन अधिकारी, ऊपरी अदालत के सामने अपने आदेश का बचाव करते हैं; वे उसका विरोध नहीं करते। यदि उच्च न्यायालय, अपने रिट क्षेत्राधिकार या पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए—जैसा भी मामला हो— अभिलेख तलब करता है, तो उच्च न्यायालय ऐसा हमेशा कर सकता है, और इसके लिए अदालत या पीठासीन अधिकारी को मामले में एक पक्ष के रूप में शामिल करने की आवश्यकता नहीं होती। प्राधिकरण या न्यायाधिकरण, जिन्हें कानूनन अपने द्वारा पारित आदेशों का बचाव करने का अधिकार है, आवश्यक पक्ष होते हैं; और यदि उन्हें पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया जाता है, तो रिट याचिका को सुनवाई योग्य नहीं माना जा सकता है, अथवा न्यायालय अपने विवेक का प्रयोग करते हुए उन्हें पक्ष के रूप में शामिल करने की अनुमति दे सकता है। ऐसे भी कुछ न्यायाधिकरण होते हैं जिन्हें अपने स्वयं के आदेश का बचाव करने की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं होती है, और ऐसे मामलों में, उन न्यायाधिकरणों को पक्ष के रूप में शामिल करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है।.....

अतः, अपर जिला न्यायाधीश को पक्षकार नहीं बनाया जाना चाहिए था।

6. यह कार्यवाही एस.सी.सी. वाद संख्या 60/2012 से उत्पन्न हुई है, जिसे मकान मालिक सलिल कुमार रस्तोगी (विपक्षी पक्ष संख्या 3) ने, किराएदार श्री राम भरोसे वर्मा (जो अब दिवंगत हैं और

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



याचिकाकर्ताओं के हित-पूर्ववर्ती हैं) को, मॉडल हाउस, लखनऊ में स्थित मकान संख्या 109/136- का ,नया संख्या 109/187 से बेदखल करने के लिए दायर किया था। मकान मालिक ने वाद में यह तर्क दिया था कि उसने यह मकान इसके पिछले मालिकों, निशी टंडन और रमेश टंडन से खरीदा था। उसने संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 106 के तहत किराएदार को एक नोटिस भेजा था, जो 28.03.2012 को तामील हो गया था; लेकिन इसके बावजूद किराएदार ने उसे किराया नहीं दिया और न ही मकान खाली किया। विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 10.12.2012 को पारित आदेश में यह दर्ज है कि प्रतिवादी राम भरोसे वर्मा ने समन की तामील होने के बावजूद न्यायालय में उपस्थिति दर्ज नहीं कराई, और इसलिए, वाद को 'एकपक्षीय' रूप से आगे बढ़ाने का आदेश दिया गया।

7. किरायेदार प्रतिवादी श्री राम भरोसे वर्मा का निधन 27.01.2013 को हो गया। वादी ने उनके वारिसों को पक्षकार बनाने के लिए एक आवेदन दायर किया। 21.03.2013 को, विचारण न्यायालय ने वारिसों को पक्षकार बनाने वाले आवेदन के नोटिस की तामील को पर्याप्त माना। 23.04.2013 को विचारण न्यायालय ने वारिसों को पक्षकार बनाने वाले आवेदन को स्वीकार करते हुए एक आदेश पारित किया, जिसमें यह दर्ज किया गया कि मृतक प्रतिवादी के प्रस्तावित वारिसों को नोटिस की तामील होने के बावजूद, उन्होंने आवेदन के खिलाफ कोई आपति दायर नहीं की थी। वादी ने साक्ष्य के रूप में स्वयं की गवाही दी और दस्तावेजी साक्ष्य के तौर पर नोटिस की एक कार्बन कॉपी, डाक रसीद और मुख्तारनामा की एक प्रति प्रस्तुत की। 16.09.2013 के एकपक्षीय निर्णय द्वारा वाद वादी के पक्ष में डिक्री कर दिया गया, जिसमें विचारण न्यायालय ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि प्रतिवादी पर चार महीने से अधिक का किराया बकाया था, और उसने किराया अदा नहीं किया था तथा नोटिस की तामील होने के बावजूद संपत्ति खाली नहीं की थी। 16.09.2013 के एकपक्षीय निर्णय और डिक्री के खिलाफ कोई पुनरीक्षण याचिका दायर नहीं की गई, और इस प्रकार यह निर्णय अंतिम रूप प्राप्त कर चुका है।

8. डिक्री धारक ने 16.09.2013 के एकपक्षीय निर्णय और डिक्री के निष्पादन के लिए निष्पादन आवेदन संख्या 1/2014 दायर किया। याचिकाकर्ताओं ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसे विविध मामला संख्या 31/2014 के रूप में पंजीकृत किया गया; जिसमें, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कहा गया था कि किराए के बकाया की मांग का नोटिस मकान मालिक, सलिल कुमार रस्तोगी द्वारा भेजा गया था, लेकिन मुकदमा उनके मुख्तारनामा धारक, श्री शोएब अहमद के माध्यम से दायर किया गया था। मकान मालिक द्वारा भेजा गया नोटिस, उसके मुख्तारनामा धारक द्वारा दायर किए गए बेदखली के मुकदमे का आधार नहीं बन सकता; खासकर तब, जब मुख्तारनामा धारक ने खुद किराएदारी खत्म करने या बकाया किराया मांगने का कोई नोटिस न भेजा हो। याचिकाकर्ताओं ने यह *"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"*



आरोप भी लगाया कि मुकदमे का समन ठीक से तामील नहीं किया गया था। हालाँकि, इस बात से कोई स्पष्ट इनकार नहीं किया गया है कि मुकदमे का समन याचिकाकर्ता-किराएदारों को तामील नहीं किया गया था। धारा 47 के तहत दायर आवेदन में उठाई गई आपत्तियों में से एक यह है कि मकान मालिक ने 'हीना वर्मा' का नाम शामिल किया है, जबकि याचिकाकर्ता संख्या 2 हेमा वर्मा हैं; और मूल प्रतिवादी दिवंगत राम की मृत्यु के बाद, उन्हें मुकदमे में प्रतिवादी के तौर पर शामिल नहीं किया गया है।

9. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत की गई आपत्तियों को दिनांक 23.05.2015 के विवादित आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था, जिसमें न्यायालय ने यह माना कि यह दलील कि वाद किसी मुख्तारनामा धारक के माध्यम से दायर किया गया था, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत दायर आपत्तियों के आधार पर जाँची नहीं जा सकती, क्योंकि निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे जाकर उसकी जाँच नहीं कर सकता। यह वाद मूल किरायेदार, राम भरोसे वर्मा के विरुद्ध दायर किया गया था। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके विधिक वारिसों को उनके स्थान पर पक्षकार बनाया गया। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 152 के तहत दायर एक आवेदन के माध्यम से हेमा वर्मा के नाम को संशोधित किया गया है। याचिकाकर्ता संख्या 2 के नाम की वर्तनी में मात्र एक त्रुटि होने से डिक्री की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, जबकि मृतक किरायेदार, श्री राम भरोसे वर्मा के विधिक वारिसों को नोटिस विधिवत तामील कराए गए थे और उन्हें कार्यवाही की पूर्ण जानकारी थी।

10. दिनांक 23.05.2015 के विवादित आदेश में यह भी उल्लेख किया गया है कि हेमा वर्मा ने निष्पादन वाद संख्या 1/14 में एक आवेदन प्रस्तुत किया था, जिसमें यह कहा गया था कि वह कार्यवाही में कोई पक्षकार नहीं हैं, बल्कि हीना वर्मा को पक्षकार बनाया गया है; और इसलिए, वह निष्पादन वाद के परिणाम से बाध्य नहीं होंगी। याचिकाकर्ता संख्या 2 की इस आपत्ति का निपटारा दिनांक 08.05.2015 के एक विस्तृत आदेश के माध्यम से पहले ही किया जा चुका है।

11. निष्पादन न्यायालय ने आगे यह माना कि एससीसी मुकदमा 17.05.2012 को दायर किया गया था, प्रतिवादी को समन जारी किए गए थे और 10.12.2012 को समन की तामील को पर्याप्त माना गया तथा मुकदमे को एकपक्षीय रूप से आगे बढ़ाने का आदेश दिया गया। मूल प्रतिवादी, श्री राम भरोसे वर्मा की मृत्यु के बाद, उनके प्रस्तावित वारिसों को नोटिस जारी किए गए और 21.03.2013 के एक आदेश के माध्यम से नोटिस की तामील को पर्याप्त माना गया, इस आधार पर कि वारिसों ने नोटिस लेने से इनकार कर दिया था; और इसके बाद, 23.04.2013 के एक आदेश के माध्यम से प्रतिस्थापन आवेदन को स्वीकार कर लिया गया।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



12. निष्पादन न्यायालय ने यह माना कि याचिकाकर्ता संख्या 2 मूल किरायेदार की पुत्री है और अन्य संयुक्त किरायेदारों के विरुद्ध पारित डिक्री उस पर भी समान रूप से बाध्यकारी होगी, क्योंकि कोई भी संयुक्त किरायेदार अन्य संयुक्त किरायेदारों का प्रतिनिधित्व कर सकता है। याचिकाकर्ता संख्या 2 के नाम के विवरण में मात्र एक त्रुटि डिक्री को अमान्य नहीं बना देगी। इस आदेश की पुनरीक्षण में पुष्टि की गई है।

13. उपर्युक्त आदेशों की वैधता को चुनौती देते हुए, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि मूल मृतक किरायेदार स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा के वारिसों को प्रतिस्थापित किए जाने के पश्चात्, विचारण न्यायालय ने मूल किरायेदार के वारिसों को कोई सूचना जारी नहीं की और न्यायालय ने एक-पक्षीय निर्णय एवं डिक्री पारित कर दी, जो कि पूर्णतः शून्य है।

14. विचारण न्यायालय के आदेश पत्र के अवलोकन से पता चलता है कि जब मूल प्रतिवादी को मुकदमे का समन तामील किया गया था, फिर भी वह . विचारण न्यायालय के समक्ष पेश नहीं हुआ, तो 10.12.2012 को एकपक्षीय वाद को आगे बढ़ाने का आदेश पारित किया गया था। मूल किरायेदार श्री राम भरोसे वर्मा की मृत्यु 27.01.2013 को हुई थी। इसके बाद उनके उत्तराधिकारियों को बदलने के लिए एक आवेदन दायर किया गया, जिस पर दिवंगत राम भरोसे वर्मा के प्रस्तावित उत्तराधिकारियों को नोटिस जारी किए गए। 21.03.2013 को, अदालत ने एक आदेश पारित किया जिसमें यह माना गया कि स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा के प्रस्तावित वारिसों को आवेदन की सूचना की तामील पर्याप्त थी; और 23.04.2013 को, प्रतिस्थापन आवेदन स्वीकार कर लिया गया और स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा के स्थान पर उनके वारिसों को प्रतिस्थापित कर दिया गया। इसके बाद, अदालत ने एक अतिरिक्त लिखित बयान दाखिल करने के लिए एक तारीख तय की, जिसे दाखिल नहीं किया गया; वादी ने साक्ष्य प्रस्तुत किए और अपनी एकपक्षीय दलीलें रखीं, और 16.09.2013 को वाद का निर्णय एकपक्षीय रूप से कर दिया गया।

15. आदेश XXII, नियम 4 (4) निम्नानुसार उपबंध करता है: -

आदेश XXII

पक्षकारों की मृत्यु, उनका विवाह और दिवाला

4. कई प्रतिवादियों में से एक या एकमात्र प्रतिवादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया-

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



(4) न्यायालय, जब कभी वह ठीक समझे, वादी को किसी ऐसे प्रतिवादी के जो लिखित कथन फाइल करने में असफल रहा है या जो उसे फाइल कर देने पर, सुनवाई के समय उपसंजात होने में और प्रतिवाद करने में असफल रहा है, विधिक प्रतिनिधि को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता से छूट दे सकेगा और ऐसे मामले में निर्णय उक्त प्रतिवादी के विरुद्ध उस प्रतिवादी की मृत्यु हो जाने पर भी सुनाया जा सकेगा और उसका वही बल और प्रभाव होगा मानो वह मृत्यु होने के पूर्व सुनाया गया हो।"

16. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXII नियम 4(4) में दिए गए प्रावधान के अनुसार, जब मूल प्रतिवादी, स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा के विरुद्ध मुकदमा एकपक्षीय रूप से चल रहा था 10.12.2012 के आदेश के माध्यम से, तब विचारण न्यायालय के लिए स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा के विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित करना आवश्यक नहीं था; और मूल प्रतिवादी के नाम का प्रतिस्थापन किए बिना भी मुकदमे का निर्णय एकपक्षीय रूप से दिया जा सकता था। फिर भी, न्यायालय ने मृत प्रतिवादी के प्रतिस्थापन के आवेदन पर नोटिस जारी किए। ये नोटिस, उन्हें प्राप्त करने से इनकार किए जाने के कारण, तामील किए गए माने गए। 21.03.2013 के आदेश के माध्यम से, विचारण न्यायालय ने नोटिस की तामील को प्राप्त करने से इनकार के आधार पर पर्याप्त माना, और उसके बाद, मूल प्रतिवादी के वारिसों को प्रतिस्थापित कर दिया गया।

17. जब मूल प्रतिवादी के वारिसों को प्रतिस्थापित करना इसलिए ज़रूरी नहीं था क्योंकि मुकदमा पहले से ही मूल प्रतिवादी के खिलाफ एकपक्षीय चल रहा था, तो मूल प्रतिवादी के वारिसों को कोई नया समन जारी करने की कोई ज़रूरत नहीं थी; खासकर तब, जब प्रतिस्थापन के आवेदन पर नोटिस वारिसों द्वारा लेने से मना करने के कारण तामील किए गए थे। इन परिस्थितियों में, 16.09.2013 के एकपक्षीय फैसले और डिक्री को, मूल प्रतिवादी के प्रतिस्थापित वारिसों को उनके प्रतिस्थापन के बाद कोई नया समन जारी न किए जाने के आधार पर, अमान्य नहीं कहा जा सकता; क्योंकि मूल प्रतिवादी, नोटिस की तामील के बाद भी, मुकदमे का विरोध नहीं कर रहा था और मुकदमा एकपक्षीय चल रहा था।

18. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने यह दलील दी है कि याचिकाकर्ता संख्या 2 को प्रतिस्थापित नहीं किया गया है, और इसलिए, विवादित एकपक्षीय निर्णय उन पर बाध्यकारी नहीं है। प्रतिस्थापन आवेदन को देखने से पता चलता है कि मृतक प्रतिवादी के वारिस संख्या 2 का नाम हीना वर्मा के रूप में उल्लिखित है, जबकि याचिकाकर्ता संख्या 2 हेमा वर्मा हैं। विद्वान विचारण न्यायालय ने पहले ही यह माना है कि याचिकाकर्ता संख्या 2 के विवरण में यह केवल एक मुद्रण त्रुटि थी, जिसे सिविल प्रक्रिया

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



संहिता की धारा 152 के तहत पारित एक आदेश द्वारा ठीक कर दिया गया है, और इससे डिक्री अमान्य नहीं हो जाएगी।

19. उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 13 13/1972 की धारा 3(क) में निम्नलिखित प्रावधान है:

3. परिभाषाएँ- इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न हो-

(क) "किरायेदार", किसी भवन के संबंध में, अर्थ उस व्यक्ति से है जिसके द्वारा उसका किराया देय होता है, और किरायेदार की मृत्यु पर,-

(1) आवासीय भवन के मामले में, उसके केवल वे ही वारिस, जो उसकी मृत्यु के समय सामान्यतः उस भवन में उसके साथ रहते थे;

(2) एक गैर-आवासीय भवन के मामले में, उसके उत्तराधिकारी;

(स्पष्टीकरण.- किसी होटल या लॉजिंग हाउस के कमरे में रहने वाले को किरायेदार नहीं माना जाएगा;

20. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने यह स्वीकार किया है कि विचाराधीन परिसर एक आवासीय परिसर है और इसलिए, अधिनियम की धारा 3(क)(2) वर्तमान मामले पर लागू नहीं होगी। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत दिए गए आवेदन में, और साथ ही भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दी गई याचिका में भी, ऐसा कोई कथन नहीं है कि याचिकाकर्ता संख्या 2, स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा की मृत्यु के समय, विचाराधीन भवन में उनके साथ सामान्य रूप से निवास कर रही थी। इसलिए, अभिवचनों से यह सिद्ध नहीं होता कि स्वर्गीय राम भरोसे वर्मा की मृत्यु के उपरांत, याचिकाकर्ता संख्या 2 विवादित परिसर के संबंध में एक किरायेदार बन गई थी और वह उनके स्थान पर प्रतिस्थापित होने की हकदार थी।

21. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा जताया है, जो टेक्सटाइल एसोसिएशन (इंडिया) बॉम्बे यूनिट बनाम बालमोहन गोपाल कुरूप और अन्य' एआईआर 1990 सुप्रीम कोर्ट 2053 मामले से संबंधित है। इस निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि इस मामले में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रतिवादी भी उतना ही किरायेदार था, जितनी कि उसकी माँ और दूसरा भाई। ऐसी स्थिति में, उसकी माँ और भाई के विरुद्ध प्राप्त वह एकपक्षीय बेदखली आदेश, जो उसे उस मुकदमे में पक्षकार बनाए बिना प्राप्त किया गया था, रद्द किया जाना अनिवार्य है।

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



22. न तो इस मामले में ऐसा कोई निष्कर्ष है, और न ही ऐसी कोई दलीलें या बयान हैं जिनसे यह साबित हो सके कि मूल प्रतिवादी की मृत्यु के बाद याचिकाकर्ता संख्या 2 संयुक्त किरायेदारों में से एक बन गई है, इस आधार पर कि उसकी मृत्यु के समय वह आमतौर पर उस इमारत में उसके साथ रह रही थी। इसलिए, इस मामले के तथ्य उन तथ्यों से अलग हैं जिनके आधार पर टेक्सटाइल एसोसिएशन (सुप्रा) मामले में फैसला सुनाया गया था।

23. **हरीश टंडन बनाम एडीएम: (1995) 1 एससीसी 537** में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि: -

23. हमें ऐसा प्रतीत होता है कि एच.सी. पांडे बनाम जी.सी. पॉल (1989) 3 एससीसी 77 के मामले में, इस न्यायालय ने यह बात बिल्कुल सही कही थी कि मूल किरायेदार की मृत्यु के बाद—यदि इसके विपरीत कोई अन्य प्रावधान न हो तो—किरायेदारी के अधिकार मृत किरायेदार के वारिसों को संयुक्त रूप से प्राप्त हो जाते हैं। इस किरायेदारी के अधिकार और दायित्व वही होते हैं, जिनका उपभोग मूल किरायेदार करता था। यह एक ही किरायेदारी होती है, जो वारिसों को प्राप्त होती है; इसमें न तो परिसर का कोई बँटवारा होता है और न ही उसके लिए देय किराये का; और वारिस संयुक्त किरायेदारों के रूप में इस किरायेदारी के उत्तराधिकारी बनते हैं।

24. **ज्ञान देवी आनंद बनाम जीवन कुमार 1985) 2 एससीसी 683** के मामले में, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, 1958 के संबंध में कहा:

किराया अधिनियम में इसके विपरीत किसी प्रावधान के अभाव में, मृत किरायेदार के वारिस मृत किरायेदार का स्थान ले लेंगे; और मृत किरायेदार के सभी अधिकार और दायित्व—जिनमें अधिनियम के तहत मृत किरायेदार को दी गई सुरक्षा भी शामिल है—मृत किरायेदार के वारिसों को हस्तांतरित हो जाएँगे। चूँकि किराया अधिनियम द्वारा किसी किरायेदार को, किरायेदारी समाप्त होने के बाद, और ऐसे किरायेदार की मृत्यु पर उसके वारिसों को दी जाने वाली सुरक्षा, किरायेदारों के लाभ के लिए अधिनियम द्वारा ही सृजित की गई है; अतः विधानमंडल के लिए यह खुला है कि वह, ऐसी सुरक्षा प्रदान करते हुए, अधिनियम में उन लाभों और सुरक्षा की प्रकृति व सीमा के संबंध में—जिनका उपभोग किया जाना है—तथा उनके उपभोग के तरीके के संबंध में उचित प्रावधान करे। यदि विधानमंडल अधिनियम में कोई ऐसा प्रावधान करता है जो मृत किरायेदार के वारिसों के किसी विशिष्ट वर्ग द्वारा उपभोग किए जाने वाले लाभ और सुरक्षा की प्रकृति को किसी निर्धारित तरीके से सीमित या प्रतिबंधित करता हो—और ऐसा किसी निर्धारित शर्त के पूरा होने पर लागू होता हो—तो ऐसी स्थिति में, सुरक्षा का लाभ अनिवार्य रूप से

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



उस शर्त के पूरा होने पर ही, तथा अधिनियम में निर्धारित तरीके और सीमा के अनुसार ही प्राप्त किया जा सकेगा।

25. अधिनियम बनाने वालों ने धारा 12, 20 और 25 में अपना इरादा साफ़ तौर पर ज़ाहिर किया है। इन धाराओं में, मूल किरायेदार की मौत के बाद उसके वारिसों को संयुक्त किरायेदार माना गया है, और अगर उनमें से कोई भी संयुक्त किरायेदार कोई उल्लंघन करता है, तो मूल किरायेदार के सभी वारिसों को उसका खामियाज़ा भुगतना पड़ेगा। वे यह दलील नहीं दे सकते कि जब तक धारा 20 की उप-धारा (2) में बताए गए बेदखली के आधारों को उनमें से हर एक के खिलाफ अलग-अलग साबित नहीं कर दिया जाता, तब तक उन्हें संबंधित जगह से बेदखल नहीं किया जा सकता।

24. दुर्गा प्रसाद तिवारी बनाम एडिशनल डिस्ट्रिक्ट जज/स्पेशल जज (एस.सी./एस.टी. एक्ट), इलाहाबाद: (2008) 1 ऑल.एल.जे. 518 = 2007 एससीसी ऑनलाइन ऑल 590 में, इस कोर्ट ने माना कि

20. ...सुप्रीम कोर्ट ने हरीश टंडन (सुप्रा) के मामले में स्पष्ट रूप से यह माना है कि किरायेदार के वारिस उस जगह को 'संयुक्त किरायेदार' के तौर पर पाते हैं, न कि 'साझा किरायेदार' के तौर पर; और इसलिए, अधिनियम की धारा 21(1)(क) के तहत होने वाली कार्यवाही के लिए, उनमें से किसी एक को दिया गया नोटिस ही सभी के लिए पर्याप्त नोटिस माना जाएगा। सुप्रीम कोर्ट ने यह फैसला दिया कि मूल किरायेदार की मृत्यु के बाद, उसके वारिस 'संयुक्त किरायेदार' बन जाते हैं, न कि 'साझा किरायेदार'।

अतः, याचिकाकर्ता संख्या 2 मात्र कई संयुक्त किरायेदारों में से एक होने के कारण, यदि उसे नोटिस तामील करने में कोई त्रुटि भी हुई हो, तो भी इससे सभी संयुक्त किरायेदारों के विरुद्ध पारित डिक्री शून्य नहीं हो जाएगी, जबकि अन्य संयुक्त किरायेदारों को नोटिस तामील किए जा चुके थे।

25. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने आगे यह दलील दी कि मुकदमे के समन मूल प्रतिवादी पर ठीक से तामील नहीं किए गए थे। विचारण न्यायालय ने 10.12.2012 के अपने आदेश में मुकदमे की उचित तामील के संबंध में अपनी संतुष्टि दर्ज की थी, जिसके आधार पर 03.10.2013 को एकपक्षीय निर्णय और डिक्री पारित की गई थी। याचिकाकर्ताओं ने 10.12.2012 के आदेश को चुनौती नहीं दी, और न ही उन्होंने 03.10.2013 के एकपक्षीय निर्णय और डिक्री के विरुद्ध प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 25 के तहत कोई पुनरीक्षण याचिका दायर की। यह एक स्थापित विधि है कि निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे जाकर उसकी जाँच नहीं कर सकता, और न ही वह एकपक्षीय निर्णय में, अथवा मुकदमे की लंबितता के दौरान पारित किसी आदेश में, विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



गए तथ्यों या संतुष्टि की जाँच कर सकता है। इसलिए, 'सिविल प्रक्रिया संहिता' की धारा 47 के तहत चलने वाली कार्यवाही में इस दलील को उठाने का अवसर उपलब्ध नहीं है।

26. उपरोक्त चर्चाओं को देखते हुए, मुझे याचिका पर विचार करने का कोई उचित आधार नहीं मिलता है, जिसे स्वीकृति चरण पर ही खारिज किया जाता है।

(सुभाष विद्यार्थी, न्यायमूर्ति)

05 जनवरी, 2026

राम

Translated version. Not for Legal Use.

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"